समीक्षा

अक्तूबर-दिसंबर, 2003

अंक : 3 • वर्ष : 36

सपादक

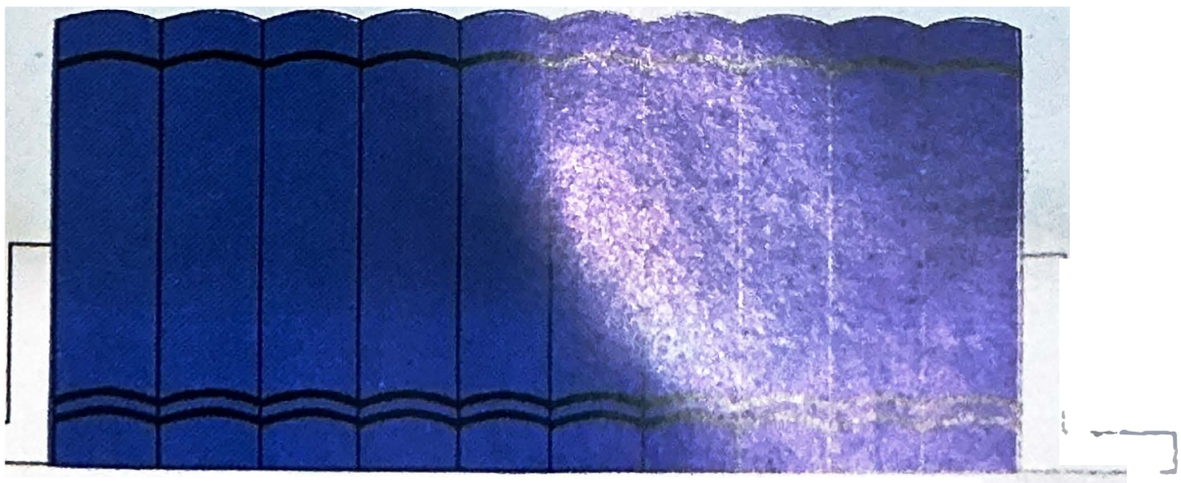

गोपाल राय : हरदयाल

• अक्षयवट • समग्र कहानियां (कमलेश्वर) • साहित्य का
(जोगिन्दर पाल) • चुनी हुई शायरी (कैफी आजमी) • उजाड़
उपन्यास (कमलेश्वर) • देह-प्रसंग • दलित साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र •
साहित्य का आधा इतिहास • उपन्यास की पहचान • भारतीय
गमक फूलों की • मानक हिन्दी का स्वरूप • अभिमन्यु अनत की
• हिन्दी के आदि शैलीकार सदल मिश्र • नागा • जैसा मैंने देखा •

समीक्षा

अक्तूबर-दिसम्बर, 2003
वर्ष 36 : अंक 3

प्रकशन-तिथि :
20 दिसम्बर, 2003

संपादक
गोपाल राय : हरदयाल
सह-संपादक : सत्यकाम
प्रस्तुति : श्रीकृष्ण

सम्पर्क :
संपादक, समीक्षा
एच-2, यमुना
इ.गा.रा.मु. विश्वविद्यालय
मैदानगढ़ी, नयी दिल्ली-110068
फोन : 26853534

वार्षिक सहयोग राशि : 80.00
प्रेषण तथा अन्य सेवा शुल्क : 20.00
व्यक्ति ग्राहकों के लिए रु. 10/- की छूट
आजीवन सहयोग राशि (संस्थाएं) : 1500.00
आजीवन सहयोग राशि (व्यक्ति) : 1000.00

निवेदन

- कृपया चेक अथवा ड्राफ्ट 'समीक्षा' के नाम (देय दिल्ली-नयी दिल्ली) नये पते पर ही भेजें। दिल्ली के बाहर के चेक में शुल्क की राशि के साथ रु. 35/- बैंक कमीशन जोड़ दें।
- मनीआर्डर के कूपन पर प्रेषित धनराशि और प्रेषक का नाम-पता अवश्य लिखें।
- कोई अंक न मिलने पर उसकी सूचना शीघ्र दें।
- शुल्क के बिल का भुगतान यथाशीघ्र करें।

व्यक्ति ग्राहकों से निवेदन है कि वे अपनी शुल्क-अवधि के समाप्त होते ही नये वर्ष का शुल्क भेज दें, ताकि हमें पत्र न लिखना पड़े और समीक्षा की आपूर्ति भी जारी रहे।

अनुक्रम

सम्पादकीय	गोपाल राय	2
अक्षयवट : खोये और छूटे हुए शहर की दास्तान	मधुरेश	8
कस्बे से महानगर तक : समग्र कहानियां	हरदयाल	12
साहित्य के स्वभाव की पहचान : साहित्य का स्वभाव	सदानन्दप्रसाद गुप्त	15
जोगिन्दरपाल की कहानियां	वेदप्रकाश अमिताभ	18
कैफ़ी आज़मी की चुनी हुई शायरी	अल्पना मिश्र	21
निराशावादी कविताएं : उजाड़ में संग्रहालय	हरदयाल	22
समय और समाज से संवाद करते उपन्यास : समग्र उपन्यास	हरिनारायण ठाकुर	24
देह-प्रसंग	वीरेन्द्रकुमार श्रीवास्तव	26
दलित साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र	सदानन्दप्रसाद गुप्त	28
दलित जीवन पर सरसरी नजर : नागफांस	आदर्श सक्सेना	30
हिन्दी साहित्य का आधा इतिहास	राजमल बोरा	32
उपन्यास की पहचान	आलोक पांडेय	33
भारतीय काव्य-चिन्तन	सदानन्दप्रसाद गुप्त	35
गन्ध गमक फूलों की	सत्यकेतु सांकृत	37
मानक हिन्दी का स्वरूप	राजमल बोरा	39
सात रंगों वाले कविता-संकलन	जगदीश्वरप्रसाद	40
काम-सम्बन्धों के यथार्थ के आसपास : अभिमन्यु अनत की आरंभिक कहानियां	वेदप्रकाश अमिताभ	47
हिन्दी के आदि शैलीकार सदल मिश्र	त्रिभुवन राय	48
स्त्री, तुम्हारा स्थान कहां है? : वामा	मधु सन्धु	50
संवेदनशील दृष्टि की पीड़ा : जैसा मैंने देखा	आदर्श सक्सेना	52
रामगाथा : उपन्यास के कलेवर में	शत्रुघ्नप्रसाद	53

पुस्तक-परिचय : व्यंग्य-विनोद से भरपूर उन्नीस एकांकी, दस हजार बुद्धों के लिए एक सौ गाथाएं, भारतीय भाषाओं के पुरस्कृत साहित्यकर, महामति प्राणनाथ, अक्षत, शिखर लक्ष्य है, जब रहा न कोई चारा, बचपन — 55

गोपाल राय

सम्पादकीय

2 नवम्बर को मैं गोरखपुर गया हुआ था। 'दस्तावेज' के सौवें अंक का प्रो. विष्णुकान्त शास्त्री द्वारा लोकार्पण होने वाला था। मैं भी उसमें 'दो शब्द' बोलने के लिए आमंत्रित था। सोचकर गया था कि वहां परमानन्द जी श्रीवास्तव से सम्पर्क होगा। जाने के पहले राजकमल प्रकाशन से सूचना मिली थी कि वे 3 नवम्बर को दिल्ली आने वाले हैं, पर गोरखपुर पहुंचते ही पता चला कि वे तो दिल्ली चले गये हैं। मुझे थोड़ा आश्चर्य हुआ। गोरखपुर से 25 वर्षों तक लगातार निकलने वाली हिन्दी की एक प्रतिष्ठित पत्रिका की पच्चीसवीं वर्षगांठ मनायी जा रही हो और वहीं का एक प्रमुख साहित्यकार उसी दिन अपने को वहां से अनुपस्थित कर ले, यह मेरे लिए चौंकाने वाली बात थी, पर ज्यों ही उस दिन के हिन्दी अखबार (राष्ट्रीय सहारा, गोरखपुर संस्करण) के अन्तिम पृष्ठ पर नजर पड़ी, मामला साफ हो गया। उसमें बॉक्स के भीतर तीन व्यक्तियों की 'दस्तावेज' पर टिप्पणियां छपी थीं, जिनमें पहली डॉ. परमानन्द श्रीवास्तव की थी। उसकी पहली पंक्ति थी : "एक अनौपचारिक माहौल में कवि केदारनाथ सिंह के एक वक्तव्य के हवाले से बात चीत शुरू करते हुए—दस्तावेज बस निकलती रहने वाली पत्रिका है। इसका कोई इम्पैक्ट नहीं है।" पहली पंक्ति—जो वाक्यरचना की दृष्टि से अधूरी है—में व्यक्त विचार केवल परमानन्द जी के ही नहीं हैं, बल्कि केदारनाथ सिंह के भी बताये गये हैं। चूंकि आगे की पंक्तियों को उद्धरण-चिह्नों के अन्दर नहीं रखा गया है, अत: यह कहना मुश्किल है कि दूसरी और उसकी बाद की पंक्तियों में केदारनाथ सिंह का साक्ष्य है या नहीं। इसका उत्तर स्वयं केदारनाथ सिंह जी ही दें, तो दें, पर वक्तव्य की पहली ही पंक्ति उसके लेखक की गैर-जिम्मेदारी का परिचायक है। केदारनाथ सिंह हों या परमानन्द श्रीवास्तव, दोनों ही हिन्दी के कमोवेश प्रतिष्ठित लेखक माने जाते हैं। उनके एक-एक शब्द का महत्त्व होना चाहिए। 'दस्तावेज' को 'बस निकलती रहने वाली पत्रिका' कहना उस पत्रिका और उसके सम्पादक का ही अपमान नहीं है, उन सारे लेखकों का भी अपमान है, जिनकी रचनाएं उसमें छपती रही हैं। उन लेखकों में परमानन्द जी हैं या नहीं, यह मैं नहीं जानता, पर यह जानता हूं कि उनमें दर्जनों लेखक ऐसे जरूर हैं, जो लेखक के रूप में परमानन्द जी से उन्नीस नहीं हैं। विश्वनाथ प्रसाद तिवारी जिस निष्ठा से 'दस्तावेज' निकालते रहे हैं, अंकों की योजना और रचनाओं के चयन में उन्होंने जिस सम्पादकीय विवेक और तटस्थता का परिचय दिया है, वह बहुतों के लिए अनुकरणीय है। यह देखकर दु:ख होता है कि जिस काम की तारीफ होनी चाहिए थी, उसे इस प्रकार नगण्य घोषित कर दिया गया है, मानो वह बस थूकने-खखारने की क्रिया मात्र हो। 25 वर्षों तक अपने बलबूते पर कोई साहित्यिक पत्रिका निकालते रहना खेल नहीं है और इसे वेतनभोगी सम्पादक तो समझ ही नहीं सकता। कुछ ऐसी ही टिप्पणियां 'समीक्षा' के बारे में भी की गयी थीं, जिन्हें मैंने 'स्वानवृत्ति' का परिचायक माना था। हिन्दी की साहित्यिक पत्रकारिता में अकारण-सकारण भूंकने, काटने-चाटने वाले जीवों और तबलचियों-ढोलपीटकों की एक जमात पैदा हो गयी है, जो दूसरों को अपमानित करने में ही रस लेती है। परमानन्द जी को इस जमात से नहीं जोड़ा जा सकता, पर उनके वक्तव्य के पीछे कोई पेंच तो है ही। इस वक्तव्य से केदारनाथ सिंह जी का जुड़ना समझ में नहीं आता।

वक्तव्य के दूसरे वाक्य में कहा गया है कि 'दस्तावेज' का कोई 'इम्पैक्ट' नहीं है। दो अंकों को—प्रेमचन्द विशेषांक और हजारीप्रसाद द्विवेदी विशेषांक—अपवाद मान लेने के बाद कहा गया है कि "फिर किसी अंक की नोटिस नहीं ली गयी। किसी विधा में इसकी पहचान नहीं बनी। कोई आलोचनात्मक विवेक नहीं बना, और तो और साहित्य का अच्छा दस्तावेज भी नहीं बना।" यह कथन गैर-जिम्मेदारी का नमूना है। क्या परमानन्द जी ने कोई सर्वेक्षण कराया है, जिससे इसके नोटिस न लिये जाने का तथ्य सामने आया है। इसकी कोई 'पहचान' नहीं बनी,